पारित किया जाता है तो यह या तो धारा 86 की उपधारा (1) के निबंधनानुसार या इससे अन्यथा होगा । अपील अंतिम आदेश के विरुद्ध की जाती है । धारा 86 की उपधारा (1) के अधीन पारित आदेश भी अंतिम होता है । हो सकता है कि उस दशा में उससे उद्भूत अपील मंजूर कर ली जाए तो मामला संभवतः विप्रेषित करना अपेक्षित हो किन्तु इससे उसके अधीन पारित कोई आदेश अंतवर्ती आदेश नहीं हो जाएगा । इससे उससे संलग्न अन्तिमता की धारणा समाप्त नहीं हो जाती ।

17. यद्यपि इस प्रश्न पर कोई प्रत्यक्ष (सुस्पष्ट) विनिश्चय नहीं है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि **हरि शंकर जैन** बनाम **सोनिया गांधी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने निर्वाचन अर्जी नामंजूर करने संबंधी आदेश के विरुद्ध धारा 116क के अधीन अपील ग्रहण की थी ।

18. तत्पश्चात् विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि इस विशेष इजाजत याचिका को अधिनियम की धारा 116क के अधीन अपील समझा जाए । कोई अपील अधिकरण (उच्च न्यायालय) के आदेश और निर्णय के 30 दिनों के भीतर फाइल की जानी आवश्यक है और 30 दिनों के पश्चात् अपील फाइल करने की दशा में विलम्ब की माफी देने की शक्ति उच्चतम न्यायालय को प्रदत्त की गई है । वर्तमान मामले में अधिनियम की धारा 116क की उपधारा (2) से संलग्न परन्तुक के निबंधनों के अनुसार विलंब की माफी के लिए कोई आवेदन फाइल नहीं किया गया है । चूंकि यह अपील अन्यथा भी परिसीमा से वर्जित है इसलिए हम इस अपील को अधिनियम की धारा 116क के अधीन अपील के रूप में नहीं मान सकते । अतः हमारी यह राय है कि उक्त विशेष इजाजत याचिका संधार्य नहीं थी और संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन दी गई इजाजत गलत रूप में दी गई थी । तदनुसार यह प्रतिसंहृत की जाती है । विशेष इजाजत याचिका खारिज की जाती है ।

19. खर्चे की बाबत कोई आदेश नहीं किया जा रहा है ।

अपील खारिज की गई ।

उ./ज.

[2003] 4 उम. नि. प. 382

लालू प्रसाद उर्फ **लालू प्रसाद यादव**

बनाम

राज्य मार्फत **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो (ए.एच.डी.) रांची, झारखंड**

26 अगस्त, 2003

न्यायमूर्ति एस. एन. वरियावा, न्यायमूर्ति पी. वेंकटराम रेड्डी और न्यायमूर्ति अशोक भान

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – **धारा 223 – मजिस्ट्रेट की मामलों का समामेलन करने की वैवेकिक शक्ति – मामलों के समामेलन संबंधी कोई आदेश करने के पूर्व मजिस्ट्रेट का यह समाधान किया जाना चाहिए कि ऐसा करने से अन्य संबंधित व्यक्तियों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और यह कि ऐसा करना न्याय के हित में समीचीन भी है ।**

वर्तमान अपीलें झारखंड राज्य के विशेष न्यायालयों में लंबित छह मामलों के समामेलन के संबंध में है । उच्चतम न्यायालय में ये अपीलें झारखंड उच्च न्यायालय के उस आदेश के विरुद्ध फाइल की गईं जिसके द्वारा न्यायालय ने उसके समक्ष समामेलन के लिए फाइल की गईं रिट याचिकाएं (दांडिक) और दांडिक प्रकीर्ण आवेदन खारिज कर

---

[1] (2001) 8 एस. सी. सी. 233.

दिए गए थे । न्यायालय द्वारा अपीलों का तदनुसार निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – मजिस्ट्रेट का इस बाबत समाधान किया जाना चाहिए कि मामलों का समामेलन करने से व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और यह कि मामलों का समामेलित किया जाना समीचीन है । उच्च न्यायालय ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि यह प्रश्न केवल तभी विनिश्चित किया जाना चाहिए जब अन्य मामले भी तैयार हों और आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर पहुंच गए हों । जैसा कि ऊपर उपदर्शित किया गया है सभी मामले आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर नहीं पहुचे हैं । तीन मामले अभी भी हाजिरी के प्रक्रम पर हैं । दो मामले आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर हैं । अतः यह आवेदन हर प्रकार से समयपूर्व हैं । इसके अतिरिक्त वर्तमान प्रयास से मामला सं. 20(ए) 96-पटना के विचारण में संभवतः विलंब हो सकता है जिसमें पर्याप्त रूप से प्रगति हो चुकी है । उच्च न्यायालय ने यह भी सही ही अभिनिर्धारित किया कि विचारण न्यायालय ही ऐसा न्यायालय है जिसे उन अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के, जिन्होंने संयुक्त विचारण के लिए प्रार्थना नहीं की है, पक्षकथन पर विचार करना चाहिए था । इस बात पर विचार करना होगा कि अपीलार्थियों के अतिरिक्त बहुत से अन्य अभियुक्त व्यक्ति हैं । अधिकांश अन्य अभियुक्त व्यक्तियों ने संयुक्त विचारण के लिए आवेदन नहीं किया है । इस न्यायालय को यह पता नहीं है कि उनका पक्षकथन क्या है । जब अपीलार्थियों के कांउसेल को यह बताया गया तो यह कथन किया गया कि सभी मामलों में के सभी अभियुक्तों द्वारा संयुक्त विचारण के लिए सहमति संबंधी शपथपत्र इस न्यायालय के समक्ष फाइल कर दिया जाएगा । न्यायालय के विचार से यह ऐसा प्रक्रम नहीं है जिस पर कि ऐसे शपथपत्र फाइल किए जा सकते हैं । समामेलन संबंधी आवेदन करने के पूर्व ही सहमति प्राप्त करनी चाहिए थी । इस पर विचार करना विशेष न्यायाधीश का कार्य है कि सभी मामलों में सभी अभियुक्त व्यक्तियों का संयुक्त रूप से विचारण किया जाना समीचीन और न्याय के हित में था अथवा नहीं । अपीलार्थियों को इस रीति में विचारण न्यायालय की अनदेखी करने की अनुज्ञा प्रदान करना न तो समीचीन है और न ही उचित है । षड्यंत्र का अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन के मुख्य अपराध से सहबद्ध अपराध हैं । मामले विशेष न्यायाधीशों के समक्ष हैं क्योंकि मुख्य अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन के थे । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन मुख्य अपराध प्रत्येक मामले में उस मामले में अभिकथित संव्यवहार के सम्बंध में थे । चूंकि षड्यंत्र केवल सहबद्ध अपराध है इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि अभिकथित प्रकट कार्य उसी संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए थे । न्यायालय इस विनिश्चय से आबद्धकर हैं । बहरहाल न्यायालय को इससे भिन्न मत अपनाने का कोई कारण दिखाई नहीं देता । चूंकि यह पहले ही अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि मुख्य आरोप (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन) पृथक् और सुभिन्न कार्रवाइयों अर्थात् भिन्न-भिन्न राजकोषों (खजानों) से भिन्न-भिन्न समयावधि पर धनराशि निकालने, अतः न्यायालय यह समझने में असमर्थ है कि इन मामलों को किस प्रकार समामेलित किया जा सकता है । इस प्रक्रम पर यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि डा. जगन्नाथ मिश्रा ने केवल इन सभी मामलों को एक ही न्यायालय में अन्तरित करने के लिए आवेदन किया है । अतः उनका आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 407 के अधीन आता है । न्यायालय को यह सूचित किया गया है कि सभी विशेष न्यायालय झारखंड में एक ही भवन में स्थित हैं । इस समय सभी न्यायालय निर्बाध रूप से और ऋजुतापूर्वक कार्य कर रहे हैं और मामलों का शीघ्रतापूर्वक निपटारा किया जा रहा है । न्यायालय इस मत से भी सहमत हैं कि (मामलों को) एक ही न्यायालय में अंतरित किए जाने से अन्य अभियुक्त व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । अतः यद्यपि न्यायालय अन्य अपीले मंजूर करने के लिए तैयार हो भी जाए कि जो न्यायालय नहीं कर रहा है तो भी डा. जगन्नाथ मिश्रा द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दिए जाने योग्य है । इस बात का परिवाद किया गया है कि अपीलार्थी एक ही साक्ष्य 5/6 बार सुनाने के लिए मजबूर हो जाएंगे । यदि अपीलार्थी या उनमें से कोई व्यक्ति इससे अपने को व्यथित महसूस करता है और यदि वे ऐसी वांछा करता है तो वे विशेष न्यायाधीशों के समक्ष यां आवेदन कर सकते हैं कि एक मामले में अभिलिखित साक्ष्य और एक मामले में प्रदर्श के रूप में चिह्नांकित दस्तावेजों को अन्य मामलों में भी साक्ष्य के रूप में प्रयुक्त किया जाए । इससे वे एक ही साक्ष्य को 5/6 भिन्न-भिन्न मामलों में बार-बार सुनने से बच जाएंगे । न्यायालय को विश्वास है कि यदि ऐसा कोई

आवेदन किया जाता है तो सभी अन्य अभियुक्तों को सुनने के पश्चात् इस पर विशेष न्यायाधीश द्वारा गुणागुण के आधार पर विचार किया जाएगा । (पैरा 10,11,12 तथा 14)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2001]	(2001) 9 एस. सी. सी. 432 : **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** बनाम **ब्रज भूषण प्रसाद** ;	5,11
[2001]	(2001) 4 एस. सी. सी. 350 : **मोहन बैठा** बनाम **बिहार राज्य** ;	8
[2000]	(2000) 3 पटना ला जर्नल रिपोर्ट्स 357 : **लालू प्रसाद** बनाम **बिहार राज्य** ;	10
[2000]	(2000) 1 एस. सी. सी. 285 : **बलबीर** बनाम **हरियाणा राज्य** ;	8
[1996]	(1996) 3 एस. सी. सी. 682 : **बिहार राज्य** बनाम **रांची जिला समता पार्टी** ;	8
[1960]	ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 661 : **के. कुन्हाहम्मद** बनाम **मद्रास राज्य** ;	8
[1957]	ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 340 : **एस. स्वामीरतनम** बनाम **मद्रास राज्य** ;	8
[1938]	ए. आई. आर. 1938 पी. सी. 130 : **बाबू लाल चौखानी** बनाम **किंग-एम्परर** ।	8

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2003 की दांडिक अपील सं. 1068.

(2003 की दांडिक अपील सं. 1066 और 1067 सहित)

2002 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 142 में झारखंड उच्च न्यायालय के तारीख 10 सितम्बर, 2002 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से — सर्वश्री पी. एस. मिश्रा, राम जेठमलानी, मनु शंकर मिश्रा, तथागत हर्षवर्धन, नित्या नंद झा, (सुश्री) स्वरूपा रेड्डी, अमितेश चन्द्र मिश्रा, राजेश प्रसाद सिंह, बी. बी. सिंह, सी. आर. सिन्हा, कुमार राजेश सिंह और अजीत कुमार सिन्हा

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री मुकुल रोहतगी, ए. मरियारपुथम, ए. डी. एन. राव, मीनाक्षी सखरडांडे, पी. परमेश्वरन और इरशाद अहमद

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. एन. वरियावा ने दिया ।

न्या. वरियावा – इजाजत दी जाती है ।

2. पक्षकारों को सुना ।

3. इन सभी अपीलों का निपटारा इस एक ही आदेश से किया जा सकता है, यद्यपि डा. जगन्नाथ मिश्रा वाले

मामले में केवल अन्तरण के लिए प्रार्थना की गई है जबकि अन्य अपीलों में विचारणों के समामेलन के लिए प्रार्थना की गई है ।

4. संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं । डा. जगन्नाथ मिश्रा और लालू प्रसाद यादव बिहार राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री हैं । उन पर और अन्य अपीलार्थियों पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन आरोपों के सरकारी कोष से बड़ी धनराशि कपट-वंचित करने (ठगने) के षड्यंत्र के अपराध के अभियोग हैं । अनेकों परिवाद फाइल किए गए हैं और झारखंड राज्य और बिहार राज्य दोनों राज्यों के विभिन्न विशेष न्यायालयों में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा इन मामलों पर अभियोजन की कार्रवाई की जा रही है । हमारा सरोकार ऐसे छह मामले से हैं जो झारखंड राज्य के विशेष न्यायालयों में लंबित पड़े हैं ।

5. यह उल्लेखनीय है कि इससे पूर्व ये मामले विशेष न्यायाधीश, पटना के समक्ष लंबित थे । तथापि **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** बनाम **ब्रज भूषण प्रसाद**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय के अनुसरण में ये मामले झारखंड के विशेष न्यायाधीश के न्यायालयों को अन्तरित कर दिए गए हैं । जब इन मामलों में से दो मामले अर्थात् आर. सी. 20(ए)/96 और आर. सी. 64(ए)/96 विशेष न्यायाधीश, पटना के समक्ष लंबित थे तो इन मामलों का संयुक्त विचारण करने के लिए एक आवेदन किया गया था । इस आवेदन को विशेष न्यायाधीश द्वारा नामंजूर कर दिया गया था । उच्च न्यायालय ने वह दांडिक अपील खारिज कर दी जो नामंजूर किए जाने संबंधी आदेश के विरुद्ध फाइल की गई थी । इस निर्णय को (2000) 3 पटना ला जरनल रिपोर्ट्स 357 में रिपोर्ट किया गया है ।

6. तत्पश्चात् 5 मामलों के समामेलन के लिए झारखंड उच्च न्यायालय, रांची के समक्ष रिट याचिकाएं (दांडिक) और एक दांडिक प्रकीर्ण आवेदन फाइल किया गया । डा. जगन्नाथ मिश्रा ने अन्तरण संबंधी आवेदन द्वारा पांचों मामलों को एक न्यायालय में अन्तरित करने के लिए आवेदन किया । डा. जगन्नाथ मिश्रा का आवेदन तारीख 6 अगस्त, 2002 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था । अन्य रिट याचिकाएं और दांडिक प्रकीर्ण आवेदन तारीख 10 सितम्बर, 2002 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिए गए थे । अतः ये अपीलें की गईं । हमारे समक्ष सभी ने छह मामलों के समामेलन के लिए आवेदन किया है ।

7. अपीलार्थियों की ओर से यह निवेदन किया गया कि यद्यपि पटना उच्च न्यायालय द्वारा इन अपीलों को खारिज कर दिया गया था तथापि उनमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ये सभी एक ही षड्यंत्र के बारे में थी । यह निवेदन किया गया कि (मामलों को) समामेलित करने संबंधी आवेदन पटना उच्च न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज करते हुए दी गई स्वतंत्रता के अनुसरण में किया गया था । यह निवेदन किया गया कि अभियोजन पक्ष के अनुसार यह एक बहुत बड़ा षड्यंत्र है, जिसमें तत्कालीन मुख्य मंत्री और पशुपालन विभाग के अन्य अधिकारी सम्मिलित थे । यह निवेदन किया गया कि अभियोजन पक्ष के अनुसार षड्यंत्र का उद्देश्य विभिन्न (सरकारी) खजानों में से जो पहले बिहार राज्य में थे और अब झारखंड राज्य में आ गए हैं, सरकारी धन को निकालने, उसे बहाने का था । यह निवेदन किया गया, कि अभिकथित रूप से ये प्रकट कार्रवाइयां इसी बड़े षड्यंत्र के अनुसरण में की गई हैं । यह निवेदन किया गया कि इन प्रकट कार्रवाइयों में स्थानीय लोग भी हो सकते हैं पर वे इस बड़े षड्यंत्र का भाग नहीं हैं । यह निवेदन किया गया कि एक षड्यंत्र के अनुसरण में किए गए अपराध वे अपराध होते हैं जो एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए हों । यह निवेदन किया गया कि मुख्य अभियुक्तों अर्थात् अपीलार्थियों को केवल इस बड़े षड्यंत्र के आधार पर आरोपित किया गया था । यह निवेदन किया गया कि अपीलार्थियों के विरुद्ध इन सभी मामलों में समान साक्षी और समान दस्तावेज हैं । यह निवेदन किया गया कि ऐसे 58 साक्षी हैं जो इन सभी छहों मामलों में समान हैं । यह निवेदन किया गया कि लगभग ऐसे 100 दस्तावेज हैं जो कि इन सभी छहों मामलों में समान हैं । यह निवेदन किया गया कि अभियोजन पक्ष ने विशेष न्यायाधीश के समक्ष उत्तर में फाइल किए गए शपथपत्र के पैरा

---

[1] (2001) 9 एस. सी. सी. 432.

10 से 12 में यह स्वीकार किया है कि इनमें केवल एक ही षड्यंत्र था और यह कि ऊपर वर्णित साक्षी और दस्तावेज समान थे । यह निवेदन किया गया कि यदि इन साक्षियों को इन सभी छहों मामलों में अलग-अलग अभिसाक्ष्य देना पड़े तो इस बात कि प्रबल संभावना है कि उनके साक्ष्य भिन्न-भिन्न होंगे और ऐसा होने पर विनिश्चयों में भी विरोधाभास होगा । यह निवेदन किया गया कि अपीलार्थियों को छहों विचारणों में उन्हीं साक्षियों के साक्ष्य को सुनना होगा ।

8. इस दलील के, कि एक ही षड्यंत्र के अनुसरण में किए गए अपराध एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए अपराध होते हैं, समर्थन में **के. कुन्हाहम्मद** बनाम **मद्रास राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया गया । **बाबू लाल चौखानी** बनाम **किंग-एम्परर**[2], **एस. स्वामीरतनम** बनाम **मद्रास राज्य**[3], **मोहन बैठा** बनाम **बिहार राज्य**[4], **बलबीर** बनाम **हरियाणा राज्य**[5] और **बिहार राज्य** बनाम **रांची जिला समता पार्टी**[6] के प्रति भी निर्देश किया गया । इसमें विधि की प्रतिपादना के संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता है । तथापि यह देखना होगा कि क्या इस मामले में यह प्रतिपादना लागू होती है ।

9. इस प्रक्रम पर उन छहों मामलों के ब्योरों और विशिष्टियों का उल्लेख करना आवश्यक है जिन्हें समामेलित करने की ईप्सा की गई है । ये निम्नलिखित हैं –

क्रम सं.	मामला सं. आर.सी.एस	पुलिस थाना मामला सं.	अन्तर्वलित रकम	अभियुक्त व्यक्तियों की संख्या	खजाना	प्रक्रम
1	20(ए)96-पटना	12/96 चाईबासा पुलिस थाना	37.7 करोड़	56	चाईबासा	साक्ष्य (कुल 174 अभि.सा. की परीक्षा की गई)
2	38(ए)/96-पटना	16/96 दुमका पुलिस थाना	3,76,38,853/-	48 + 1 = 49	दुमका	हाजिरी
3	47(ए)/96 पटना	50/96 डोरांडा पुलिस थाना	183 करोड़	171 + 69 = 240	डोरांडा	हाजिरी
4	63(ए)/96 पटना	राज्य से प्राप्त परिवाद	45,96,048/-	44	भागलपुर और बांका	हाजिरी
5	64(ए)/96 पटना	स्रोत से प्राप्त सूचना	97 लाख	34 + 4 = 38	देवघर	आरोप की विरचना
6	68(ए)/96 पटना	स्रोत से प्राप्त सूचना	37.62 करोड़	75 + 1 = 76	चाईबासा	आरोप की विरचना

10. मामलों के समामेलन के लिए आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 223 के अधीन किया गया है, जो इस प्रकार है :–

[1] ए. आई. आर. 1960, एस. सी. 661.
[2] ए. आई. आर. 1938 पी. सी. 130.
[3] ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 340.
[4] (2001) 4 एस. सी. सी. 350.
[5] (2000) 1 एस. सी. सी. 285.
[6] (1996) 3 एस. सी. सी. 682.

"223. **किन व्यक्तियों पर संयुक्त रूप से आरोप लगाया जा सकेगा** – निम्नलिखित व्यक्तियों पर एक साथ आरोप लगाया जा सकेगा और उनका एक साथ विचारण किया जा सकेगा, अर्थात् –

(क) वे व्यक्ति जिन पर एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए एक ही अपराध का अभियोग है :

(ख) वे व्यक्ति जिन पर किसी अपराध का अभियोग है और वे व्यक्ति जिन पर ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने का अभियोग है ;

(ग) वे व्यक्ति जिन पर बारह मास की अवधि के अन्दर संयुक्त रूप में उनके द्वारा किए गए धारा 219 के अर्थ में एक ही किस्म के एक से अधिक अपराधों का अभियोग है ;

(घ) वे व्यक्ति जिन पर एक ही संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए भिन्न अपराधों का अभियोग है ;

(ङ) वे व्यक्ति जिन पर ऐसे अपराध का जिसके अन्तर्गत चोरी, उद्दापन, छल या आपराधिक दुर्विनियोग भी है, अभियोग है और वे व्यक्ति, जिन पर ऐसी संपत्ति को, जिसका कब्जा प्रथम नामित व्यक्तियों द्वारा किए गए किसी ऐसे अपराध द्वारा अन्तरित किया जाना अभिकथित है, प्राप्त करने या रखे रखने या उसके व्ययन या छिपाने में सहायता करने का या किसी ऐसे अंतिम नामित अपराध का दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने का अभियोग है ;

(च) वे व्यक्ति जिन पर ऐसी चुराई हुई संपत्ति के बारे में, जिसका कब्जा एक ही अपराध द्वारा अंतरित किया गया है, भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 411 और धारा 414 के, या उन धाराओं में से किसीं के अधीन अपराधों का अभियोग है ;

(छ) वे व्यक्ति जिन पर भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) के अध्याय 12 के अधीन कूटकृत सिक्के के संबंध में किसी अपराध का अभियोग है और वे व्यक्ति जिन पर उसी सिक्के के संबंध में उक्त अध्याय के अधीन किसी भी अन्य अपराध का या किसी ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण या प्रयत्न करने का अभियोग है ; और इस अध्याय के पूर्ववर्ती भाग के उपबंध सब ऐसे आरोपों को यथाशक्य लागू होंगे :

परन्तु जहां अनेक व्यक्तियों पर पृथक् अपराधों का आरोप लगाया जाता है और वे व्यक्ति इस धारा में विनिर्दिष्ट कोटियों में से किसी में नहीं आते हैं वहां मजिस्ट्रेट ऐसे सब व्यक्तियों का विचारण एक साथ कर सकता है यदि ऐसे व्यक्ति लिखित आवेदन द्वारा ऐसा चाहते हैं और मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाता है कि उससे ऐसे व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और ऐसा करना समीचीन है ।"

अतः यह उल्लेखनीय है कि खंड (क) से (छ) के लागू होने की बात को विचार में लाए बिना ही धारा 223 में मजिस्ट्रेट को मामले को समामेलित करने का विवेकाधिकार प्रदान किया गया है. । मजिस्ट्रेट का इस बात का समाधान किया जाना चाहिए कि उससे व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और यह कि मामलों का समामेलित किया जाना समीचीन है । जैसा कि इसमें इसके पूर्व उल्लेख किया गया है कि समामेलन संबंधी इस आवेदन को इससे पूर्व विशेष न्यायाधीश द्वारा नामंजूर किया जा चुका है । उच्च न्यायालय ने भी अपील नामंजूर कर दी । इन परिस्थितियों में उसी अनुतोष के लिए कोई नए सिरे से आवेदन नहीं किया जाता है । इस स्थिति को देखते हुए, यह निवेदन किया गया कि समामेलन संबंधी वर्तमान आवेदन इसलिए किया गया है क्योंकि उच्च न्यायालय पहले ही यह अभिनिर्धारित कर चुका है कि इसमें केवल एक षड्यंत्र अंतर्वलित है और (उच्च न्यायालय द्वारा) पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर समामेलन के लिए आवेदन करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई थी । अतः इस बात का परिशीलन करना आवश्यक है कि **लालू प्रसाद** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में उच्च न्यायालय द्वारा क्या अभिनिर्धारित किया है । पैरा 28 से 32 इस प्रकार है –

---

[1] (2000) 3 पटना ला जर्नल रिपोर्ट्स 357.

"28. यह तथ्य कि मामले पृथक्-पृथक् रजिस्ट्रीकृत किए गए हैं और इनकी पृथक् रूप से ही जांच की जा रही है और यह तथ्य भी कि इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि क्या एक मामले में प्रतिप्रेषण का अभिप्राय अन्य सभी मामलों में प्रतिप्रेषण होगा, इस न्यायालय ने अन्वेषण के दौरान यह अभिनिर्धारित किया कि भिन्न-भिन्न संव्यवहारों से संबंधित कुछ मामले इस मामले में अन्तर्वलित प्रश्न की बाबत निश्चायक नहीं हैं । इस न्यायालय ने केवल प्रतिप्रेषण के प्रश्न का विनिश्चय करते समय अन्वेषण के दौरान मताभिव्यक्तियां कीं । पृथक् अन्वेषण स्वतः इस तथ्य का निश्चायक नहीं होता है कि सभी मामले पृथक्-पृथक् हैं । इस प्रश्न का विनिश्चय केवल अन्वेषण के पश्चात् ही किया जाना चाहिए कि ये एक ही संव्यवहार के भाग रूप हैं अथवा नहीं । इसी प्रकार यह तथ्य कि दोनों मामलों में अभियुक्त व्यक्ति समान नहीं हैं कोई महत्वपूर्ण तथ्य नहीं है क्योंकि एकल संव्यवहार वाले मामलों में भी भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा भिन्न-भिन्न अपराध किए जाते हैं । विचराण न्यायालय के विचारार्थ सुसंगत प्रश्न यह था कि क्या भिन्न-भिन्न समय और भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न अपराध करने वाले अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा किए गए श्रृंखलाबद्ध कार्य एक समान प्रयोजन को पूरा करने के लिए किए गए थे और इसका एक ही आपराधिक आशय था जिससे कि उसे एक ही संव्यवहार का रूप दिया जा सके अथवा भिन्न-भिन्न अपराध विभिन्न प्रयोजनों या उद्देश्यों को पूरा करने के लिए स्वतंत्र रूप से किए गए थे यद्यपि मामलों के प्रयोजन और उद्देश्यों के मध्य समरूपता थी, भले ही विचारण न्यायालय का निष्कर्ष यह था कि अभिकथित रूप से किए गए अपराध एक ही संव्यवहार नहीं हैं तो भी उसे याचियों के मामलों पर भी संहिता की धारा 223 के परन्तुक के निबंधनों के अनुसार विचार करना चाहिए था कि क्या अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा लिखित में की गई ऐसी प्रार्थना के आधार पर संयुक्त विचारण करना न्याय के उद्देश्य को पूरा करने के लिए समीचीन था और क्या इससे अभियुक्त व्यक्तियों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ रहा था । विचारण न्यायालय ने इस बात का पता लगाने के लिए भी कोई प्रयास नहीं किए कि इस बाबत विचारण का सामना करने वाले अन्य अभियुक्त व्यक्तियों का क्या मत है । इन सभी कारणों से विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधिक अशक्तता से ग्रस्त था ।

30. इस विषय में अगला प्रश्न यह है कि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के पश्चात् कि विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश विधिक अशक्तता से ग्रस्त है इस मामले में क्या आदेश पारित किया जाना चाहिए । क्या इस प्रक्रम पर नए सिरे से विचार करने के लिए मामला प्रतिप्रेषित किया जाना चाहिए या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों का ध्यान में रखते हुए कोई अन्य निदेश दिया जाना चाहिए ।

31. तर्क-वितर्क के दौरान और अभियुक्तों के एक समूह की ओर से फाइल किए गए लिखित तर्कों में याची की ओर से यह निवेदन किया गया कि इन दो मामलों और अन्य मामलों में किए गए अपराध एक ही संव्यवहार के भागरूप हैं किन्तु उन्होंने अन्य मामलों का ब्यौरा नहीं दिया । अन्य मामलों में या तो आरोप पत्र दाखिल कर दिए गए हैं या उन्हें अभी दाखिल किया जाना है । उस परिस्थिति में इस प्रश्न का विनिश्चय केवल इन दो मामलों में किए गए अभिकथन को ध्यान में रखकर नहीं किया जा सकता है । यदि इस प्रश्न का विनिश्चय केवल इन दो मामलों में किए गए अभिकथनों को ध्यान में रखकर किया जाता है तो यह मामला कभी भी खत्म नहीं होगा क्योंकि जैसे ही और जब भी आरोप विरचित करने हेतु अन्य मामले प्रस्तुत किए जाएंगे तो याचियों और अन्य अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा उस समय इस प्रश्न को पुनः उठाया जाएगा और इसका परिणाम यह होगा कि विचारण की कार्रवाई किसी भी दशा में आगे नहीं बढ़ पाएगी ।'

32. पशुपालन घोटाले से उद्भूत होने वाले एक मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मेरा यह मत है कि उक्त प्रश्न को तभी विनिश्चित किया जाए जब अन्य मामले भी तैयार हो और आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर पहुंच जाए । उस प्रक्रम पर यदि अभियुक्त व्यक्तियों या अभियुक्त व्यक्तियों में से कुछ के द्वारा कोई उचित आवेदन फाइल किया जाता है तो विचारण न्यायालय उक्त प्रश्न पर विचार

करेगा । इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि कुछ अभियुक्त व्यक्तियों ने संयुक्त विचारण के लिए प्रार्थना नहीं की है, विचारण न्यायालय ऊपर उपदर्शित विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए उनके पक्षकथन पर भी विचार करेगा । विचारण न्यायालय इस बात पर भी विचार करेगा कि क्या सभी मामलों का अथवा कुछ मामलों का संयुक्त रूप से निपटारा किया जाना संभव और व्यांवहारिक होगा या कि उनका पृथक् रूप से विचारण किया जाना चाहिए । यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि सर्वोपरि ध्यान न्याय हित पर दिया जाना चाहिए ।"

अतः यह परिशीलन करने योग्य है कि उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष नहीं है कि इसमें एक ही षड्यंत्र अंतर्वलित था । उच्च न्यायालय ने यह सही ही अभिनिर्धारित किया है कि यह प्रश्न केवल तभी विनिश्चित किया जाना चाहिए जब अन्य मामले भी तैयार हों और आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर पहुंच गए हों । जैसा कि ऊपर उपदर्शित किया गया है सभी मामले आरोप विरचित करने के प्रक्रम पर नहीं पहुचे हैं । तीन मामले अभी भी हाजिरी के प्रक्रम पर हैं । दो मामले आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर हैं । अतः यह आवेदन हर प्रकार से समयपूर्व हैं । इसके अतिरिक्त वर्तमान प्रयास से मामला सं. 20(ए) 96-पटना के विचारण में संभवतः विलंब हो सकता है जिसमें पर्याप्त रूप से प्रगति हो चुकी है । उच्च न्यायालय ने यह भी सही ही अभिनिर्धारित किया कि विचारण न्यायालय ही ऐसा न्यायालय है जिसे उन अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के, जिन्होंने संयुक्त विचारण के लिए प्रार्थना नहीं की है, पक्षकथन पर विचार करना चाहिए था । इस बात पर विचार करना होगा कि अपीलार्थियों के अतिरिक्त बहुत से अन्य अभियुक्त व्यक्ति हैं । अधिकांश अन्य अभियुक्त व्यक्तियों ने संयुक्त विचारण के लिए आवेदन नहीं किया है । इस न्यायालय को यह पता नहीं है कि उनका पक्षकथन क्या है । जब अपीलार्थियों के कांउसेल को यह बताया गया तो यह कथन किया गया कि सभी मामलों में के सभी अभियुक्तों द्वारा संयुक्त विचारण के लिए सहमति संबंधी शपथपत्र इस न्यायालय के समक्ष फाइल कर दिया जाएगा । हमारे विचार से यह ऐसा प्रक्रम नहीं है जिस पर कि ऐसे शपथपत्र फाइल किए जा सकते हों । समामेलन संबंधी आवेदन करने के पूर्व ही सहमति प्राप्त करनी चाहिएं थी । इस पर विचार करना, विशेष न्यायाधीश का कार्य है कि सभी मामलों में सभी अभियुक्त व्यक्तियों का संयुक्त रूप से विचारण किया जाना समीचीन और न्याय के हित में था अथवा नहीं । अपीलार्थियों को इस रीति में विचारण न्यायालय की अनदेखी करने की अनुज्ञा प्रदान करना न तो समीचीन है और न ही उचित है ।

11. इन अपीलों को मंजूर क्यों नहीं किया जा सकता है, इसका एक अन्य महत्वपूर्ण कारण भी है । इस न्यायालय ने **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो** बनाम **ब्रज भूषण प्रसाद**[1] वाले मामले में इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या ये मामले को बिहार पुनर्गठन अधिनियम के आधार पर झारखंड राज्य में अन्तरित हो गए हैं । अन्तरण का विरोध करते हुए यह निवेदन किया गया कि ये मामले अभिकथित एक ही षड्यंत्र से, जो पटना में हुआ था, संबंधित थे । यह निवेदन किया गया कि इस प्रकार विचारण की कार्रवाइयों को पटना में ही जारी रखा जाना चाहिए । इस न्यायालय ने उन मामलों में के मुख्य अपराधों पर विचार किया । न्यायालय द्वारा जिन मामलों पर विचार किया गया है स्वीकार्यतः ये छह मामले इन्हीं का ही भाग हैं । पैरा 34 से 37 इस प्रकार है :-

"34. इन सभी 36 मामलों में अन्तर्वलित आरोपों में मुख्य अपराध क्या है ? यह निर्विवाद है कि मुख्य अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(ग) के अधीन और 13(1)(घ) के अधीन भी है । उनमें से प्रथम मुख्य अपराध को [धारा 13(1)(ग)] इस प्रकार वर्णित किया गया है :-

'13.(1) कोई लोक सेवक आपराधिक अवचार का अपराध करने वाला कहा जाता है –

*** *** ***

(ग) यदि वह लोक सेवक के रूप में अपने को सौंपी गई या अपने नियंत्रणाधीन किसी सम्पत्ति का अपने उपयोग के लिए बेईमानी से या कपटपूर्वक दुर्विनियोग करता है या उसे अन्यथा संपरिवर्तित कर लेता है या

---

[1] (2001) 9 एस. सी. सी. 432.

किसी अन्य व्यक्ति को ऐसा करने देता है ।'

दूसरे अपराध को [धारा 13(1)(घ) में] इस प्रकार वर्णित किया गया है :–

'13.(1) कोई लोक सेवक आपराधिक अवचार का अपराध करने वाला कहा जाता है –

*** *** ***

(घ) यदि वह –

(i)भ्रष्ट या अवैध साधनों से अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा अभिप्राप्त करता है, या

(ii)लोक सेवक के रूप में अपनी स्थिति का अन्यथा दुरुपयोग करके अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा अभिप्राप्त करता है, या

(iii)लोक सेवक के रूप में पद धारण करके किसी व्यक्ति के लिए को मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा बिना किसी लोक हित के अभिप्राप्त करता है ।'

35. हमारे मन में इस बात पर कोई संदेह नहीं है कि उन प्रथम दो अपराधों में परिकल्पित कार्रवाई का केन्द्र "बेईमानी से या कपटपूर्वक दुर्विनियोग करता" है । इसी प्रकार दूसरी धारा में परिकल्पित कार्रवाई का मूल सिद्धान्त भ्रष्ट या अवैध साधनों द्वारा अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई मूल्यवान चीज या धन संबंधी फायदा "अभिप्राप्त" करता है ।

36. वर्तमान मामले में जैसे ही धन लोक खजाने के बाहर आया और इसमें आलिप्त किसी भी व्यक्ति के हाथ में पहुंचा उपर्युक्त कार्रवाइयां पूरी हो गई हैं । अतः जहां तक धारा 13(1)(ग) और 13(1)(घ) के अधीन के अपराधों का संबंध है ऐसे स्थान को जहां अपराध किए गए थे, उस स्थान के रूप में आसानी से पहचाना जा सकता है जहां कि संबंधित खजाना स्थित था । यह निर्विवादित तथ्य है कि इन सभी मामलों में खजाने झारखंड राज्य में राज्यक्षेत्र के भीतर स्थित थे ।

37. अतः जब यह निश्चित हो गया है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 के अधीन अपराध वास्तव में कहां किए गए थे तो अन्य ऐसे क्षेत्रों पर, जहां पर कि षड्यंत्र या तैयारी जैसे कतिपय सहबद्ध क्रिया-कलाप अथवा प्रारंभिक या आनुषंगिक कार्य भी, जिनमें वे घटनाएं भी सम्मिलित हैं, किए गए थे जो घटित हुई थीं, विचार करना एक अनावश्यक कार्य होगा ।"

अतः इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा यह पहले ही अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि मुख्य अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन के थे । यह अभिनिर्धारित किया गया कि षड्यंत्र का अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन के मुख्य अपराध से सहबद्ध अपराध हैं । मामले विशेष न्यायाधीशों के समक्ष हैं क्योंकि मुख्य अपराध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन के थे । भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन मुख्य अपराध प्रत्येक मामले में उस मामले में अभिकथित संव्यवहार के सम्बंध में थे । चूंकि षड्यंत्र केवल सहबद्ध अपराध है इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि अभिकथित प्रकट कार्य उसी संव्यवहार के अनुक्रम में किए गए थे। हम इस विनिश्चय से आबद्धकर हैं । बहरहाल हमें इससे भिन्न मत अपनाने का कोई कारण दिखाई नहीं देता । चूंकि यह पहले ही अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि मुख्य आरोप (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन) पृथक् और सुभिन्न कार्रवाइयों अर्थात् भिन्न-भिन्न राजकोषों (खजानों) से भिन्न-भिन्न समयावधि पर धनराशि निकालने के संबंध में थे । अतः हम यह समझने में असमर्थ हैं कि इन मामलों को किस प्रकार समामेलित किया जा सकता है ।

12. इस प्रक्रम पर यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि डा. जगन्नाथ मिश्रा ने केवल इन सभी मामलों को एक ही न्यायालय में अन्तरित करने के लिए आवेदन किया है । अतः उनका आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा

407 के अधीन आता है । हमें यह सूचित किया गया है कि सभी विशेष न्यायालय झारखंड में एक ही भवन में स्थित हैं । हमें तारीख 6 अगस्त, 2002 के आक्षेपित निर्णय में दिए गए इस तर्क में कोई खामी दिखाई नहीं देती है कि मामले एक न्यायालय में अन्तरित नहीं किए जा सकते हैं क्योंकि इस समय सभी न्यायालय निर्बाध रूप से और ऋजुतापूर्वक कार्य कर रहे हैं और मामलों का शीघ्रतापूर्वक निपटारा किया जा रहा है । हम इस मत से भी सहमत हैं कि मामलों को एक ही न्यायालय में अंतरित किए जाने से अन्य अभियुक्त व्यक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । अतः यद्यपि हम अन्य अपीलें मंजूर करने के लिए तैयार हो भी जाएं जो कि हम नहीं कर रहे हैं तो भी डा. जगन्नाथ मिश्रा द्वारा फाइल की गई अपील खारिज कर दिए जाने योग्य है ।

13. उपर्युक्त इन सभी कारणों से हमें इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । सभी अपीलें खारिज की जाती हैं ।

14. मामले को समाप्त करने के पूर्व हम यह उल्लेख करना आवश्यक समझते हैं कि यह शिकायत की गई है कि अपीलार्थियों को एक ही साक्ष्य 5/6 बार सुनने के लिए मजबूर होना पड़ेगा । यदि अपीलार्थी या उनमें से कोई व्यक्ति इससे अपने को व्यथित महसूस करता है और यदि वे ऐसी वांछा करते हैं तो वे विशेष न्यायाधीशों के समक्ष यह आवेदन कर सकते हैं कि एक मामले में अभिलिखित साक्ष्य और एक मामले में प्रदर्श के रूप में चिह्नांकित दस्तावेजों को अन्य मामलों में भी साक्ष्य के रूप में प्रयुक्त किया जाए । इससे वे एक ही साक्ष्य को 5/6 भिन्न-भिन्न मामलों में बार-बार सुनने से बच जाएंगे । हमें विश्वास है कि यदि ऐसा कोई आवेदन किया जाता है तो सभी अन्य अभियुक्तों को सुनने के पश्चात् इस पर विशेष न्यायाधीश द्वारा गुणागुण के आधार पर विचार किया जाएगा ।

अपीलों का तदनुसार निपटारा किया गया ।

उ:/ज.

[2003] 4 उम. नि. प. 391

नेशनल इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड

बनाम

अजीत कुमार और अन्य

2 सितम्बर, 2003

न्यायमूर्ति दोरईस्वामी राजू और न्यायमूर्ति अरिजीत पसायत

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 147 का परन्तुक, 149(2), 145(ग), 2(14), (35), (40) और (47)[सपठित मोटर यान अधिनियम, 1939 की धारा 95 का परन्तुक, खंड (ii), धारा 96(2)(ख), 2(8), (25), (299 और (33)] – पर-व्यक्ति जोखिम – बीमाकर्ता का दायित्व – किसी माल वाहन में यात्रियों को लाना–ले जाना अधिनियम में अनुध्यात नहीं है, अत: किसी यान के स्वामी का उसके माल वाहन में यात्रा करने वाले यात्रियों का बीमा कराने का कोई कानूनी दायित्व नहीं है और न ही बीमाकर्ता का उनके (पर-व्यक्तियों के) प्रति कोई दायित्व है ।

इस अपील में विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह उद्भूत हुआ कि क्या मोटर यान अधिनियम, 1988 के अधीन बीमाकर्ता ऐसे व्यक्ति की मृत्यु या शारीरिक क्षति के लिए प्रतिकर संदाय करने का दायी होगा जो किसी माल यान में यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था । उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकरण और उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करके अपीलें मंजूर करते हुए,